प्रकरण-१
प्रकरण - १
हिन्दी भाषा और व्याकरण-उद्भव, विकास : परिचयात्मक अध्ययन

- भारोपीय परिवार
- भारतीय आर्यभाषा
  - प्राचीन भारतीय आर्यभाषा
  - मध्यकालीन भारतीय आर्यभाषा
  - आधुनिक भारतीय आर्यभाषा
- हिन्दी भाषा का उद्भव
  - हिन्दी शब्द के परंपरागत अर्थ
  - हिन्दी शब्द के आधुनिक अर्थ
- हिन्दी भाषा का विकास
  - आदिकाल, मध्यकाल, आधुनिक काल
- हिन्दी भाषा की बोलियाँ तथा क्षेत्र विस्तार
  - हिन्दी क्षेत्र की बोलियाँ
  - भारत के अन्य भाषा क्षेत्र की हिन्दी बोलियाँ
  - भारत से बाहर बोली जनेवाली हिन्दी बोलियाँ
- हिन्दी भाषा-भाषियों की संख्या
- हिन्दी व्याकरण
  - व्याकरण अर्थ - परिभाषा
  - हिन्दी व्याकरण लेखन : विकासक्रम
    - आरंभकाल, विकासकाल, उत्थानकाल, उत्कर्षकाल, नवनवेतनाकाल
प्रकरण-१

हिन्दी भाषा और व्याकरण-उद्भव,विकास : परिचयात्मक अध्ययन

भारतीय आर्थिकाभाषा का उद्भव कसूट: वैदिककाल से माना जाता है। इसका जन्म आर्थ की प्राचीन भाषा से हुआ है। मूलतः भारत के तीन चीड़मार्ग से अधिक प्रदेश व जन संख्या द्वारा प्रयुक्त भाषाएँ आर्थिकाभाषा परिवार की है। हिन्दी इसमें से एक है।

अतः हिन्दी के विकास को भारतीय भाषा के विकास से पृथक नहीं देख सकते। हिन्दी के विकास की कहानी को समझने के लिए भारतीय भाषा के विकास की कहानी को भी समझना आवश्यक है।

• भारोपीय परिवार:

समस्त विश्व में अनगिनत भाषाएँ बोली जाती है, जिसे एक परिवार का देखा दिया गया है, क्योंकि इसी परिवार की भाषा के जरिए भाराभाष्यक के माध्यम के सपें में मनुष्य समाज से एक जुट हो पाया है। भाषाविद्वान ने सुविधा हेतु उन्हें कुलों, उपकुलों, शाखाओं, उपशाखाओं या समुदायों में विभाजित किया है। इन भाषाओं के परिवारों की संख्या सौंगी के आसपास बतायी गई है, जिन्हें प्रमुख चार भाषा खंड में विभाजन कर देख सकते हैं। 1)यूरोपिया 2)अफ्रीका खंड 3)प्रशांत महासागरीय खंड 4)अमेरिका खंड।

इसमें प्रमुख बारह-तेहस भाषाकूल देखें तो- भारत यूरोपीय कूल, इरान कूल, मैले-पालीनेशियन कूल, बंग्लारूस, मध्य अफ्रीका कूल, अमेरिका की भाषाओं का कूल, आर्नेविया तथा प्रशांत महासागर की भाषाओं का कूल आदि समावेश होते हैं। धार्मिक वर्मन में उपयुक्त भाषा कूलों में भारत-यूरोपीय कूल को सर्व प्रथम माना है।

विश्व के इन सभी भाषा परिवारों में भारत यूरोपीय-भारोपीय परिवार समाविष्ट महत्त्वपूर्ण स्थान रखता है। इस परिवार ऐशिया में - भारत, बांगलादेश, नीलंका, पाकिस्तान, अफ़गानिस्तान, ईरान तथा यूरोप में - रा, रोमानिया, फ्रांस, पुर्तगाल, स्पेन, इंग्लैंड, जर्मनी आदि देशों तक विस्तृत है। इस परिवार का इराको-लिट्सिक, आर्थ कूल, जेफ्टिक परिवार आदि कई अन्य नामों से जाना जाता है। भोलानाथ तिवारी ने इसके लिए 'भारोपीय एनाटोमियन' नाम का सुझाव दिया है। जर्मन वैज्ञानिकों ने इसे 'इराको जर्मनिक' कहा है। किंतु इब अधिकांशः इसे भारोपीय (मुख्तः भारत से लेकर यूरोप तक फैला होने के कारण) ही कहते हैं। इस भारोपीय भाषा के क्षेत्र को लेकर भी मत-मतांतर है। धा. राजमणि शर्मा प्राचीन आर्यवर्त,
जिसकी सीमा ईरान के परे तक है, इसे ही इस भाषा का मूल स्थान बताते हैं। ये संस्कृत, ग्रीक, ईरानी, लेटिन, जर्मन, रसी, फ्रांसीसी, अंग्रेजी, हिन्दी, राजस्थानी, पंजाबी, सिंधी, गुजराती, मराठी, बंगाली, उड़ीसा, असमी आदि प्रमुख भाषाएँ भारतीय परिवार में समाविष्ट हैं। अनुमानानुसार 2500-2600 ई. पू. मूल भारतीय भाषा से भारतीय परिवार की भाषाओं की उत्पत्ति हुई होगी और समय की प्रगति के साथ ये भाषाएँ यूरोप तथा एशिया के विभिन्न देशों में फैली होगी। यह मूल भारतीय आर्यभाषा का इतिहास लगभग 3,500 वर्ष पुराना है। सर्व प्रथम 1870 ई. में प्रो. अस्कोली ने भारतीय भाषा परिवार की भाषाओं को धर्म के आधार पर मूलतः 'केन्तुस' तथा 'सतम' दो भागों में विभक्त किया था। भारतीय परिवार की सार्वजनिक प्रमुख भारतीय आर्य भाषा का विकास 'सतम' वर्ष की भारत ईरानी शाखा से हुआ है। इस भारतीय आर्यभाषा के सुदूर इतिहास को समय की द्रुति से तीन कालों में बांटा गया है।

1) प्राचीन भारतीय आर्यभाषा (1500 ई. पू से 500 ई. पू.)
2) मध्यकालीन भारतीय आर्यभाषा (500 ई. पू से 1000 ई. पू. तक)
3) आधुनिक भारतीय आर्यभाषा (1000 ई. पू से वर्तमानकाल तक)

भाषा की प्रमुखता के आधार पर इस भाषिक काल को संस्कृत युग, प्राचीन युग और हिन्दी युग के नाम से भी अभिव्यक्त कर सकते हैं।

1) प्राचीन भारतीय आर्यभाषा :

भारत में आये आयार्स, ड्रिक्स एवं अन्य भारतीय मूल के निवासियों द्वारा पारस्परिक आदान-प्रदान हेतु प्रयुक्त भाषा से विकसित भाषा को ही भाषा वैज्ञानिकों ने 'प्राचीन भारतीय आर्यभाषा' माना है। इस समय की भाषा का प्राचीनतम रूप प्राय: इसके नाम से मिलता है। इसकी रचना ईसा के लगभग देखड़-दो हजार वर्ष पूर्व हो गयी थी। इस काल को दो उपकालों में बांटा गया है -

A) वैदिक काल (1500 ई. पू से 800 ई. पू. तक)
B) वैदिक काल (800 ई. पू से 500 ई. पू. तक)

अर्थात् वैदिक संस्कृत लगभग १००० वर्षों तक तथा लौकिक संस्कृत 300 वर्षों तक बौद्धवाद की भाषा रही है।

2) वैदिक काल :

वैदिक काल की प्रमुख भाषा वैदिक संस्कृत आदि भाषा का विकसित रूप है। वैदिक काल की भाषा को 'प्राचीन संस्कृत', 'वैदिक', 'वैदिक', 'संस्कृत' अथवा 'छाद्व' कहते हैं। यह भाषा यास्क और पाणिनी के समय से बहुत पहले प्रचलित
थी। इसमें सहिता, ब्राह्मण, आर्यवर्ध, उपनिषद आदि का समावेश होता है। ब्राह्मण ग्रंथों से वैदिक भाषा की तीन बोधियों का संकेत मिलता है- प्रवाचनमोत्तरी, मध्यवर्ती और पूर्वी।

आ) लोकिक काल :

यूरोप में जो स्थान 'लेटिन' भाषा का है भारत में वही स्थान लोकिक संस्कृत का है। वैदिक साहित्य अन्यत किसी ही प्राचीन काल में वैदिक धिकार देने लगा, तब उसे नियममंडल करने का प्रयास होने लगा और १५०० ई. पू. से वैदिक भाषा ने सूत्रवाद होकर संस्कृत की ओर मोड़ लिया तथा ४५०० ई. पू. के लगभग सौवर्षांग पाणिनी ने उसे संस्कृत रूप में स्थापित किया। इस प्रकार 'संस्कृत' नाम बाद में आया। 'संस्कृत' का अर्थ है- संक्षिप्त कर गई, बनाई गई, शिलाद। इसे 'क्लासिकल संस्कृत', 'लोकिक संस्कृत', 'पाणिनी संस्कृत' भी कहते हैं। इसका प्राचीनतम प्रयोग वाल्मीकीय रामायण (३०० ई. पू.) में मिलता है। इसका विकास वैदिक भाषा के उद्धीय बोली रूप से हुआ है। पाणिनी का 'अग्राधयायी' व्याकरण तथा परम्परा का 'महाभाष्य' इसके उदाहरण है। धर्म, दर्शन, व्याकरण, काव्यशास्त्र, कोष आदि वैविध्यपूर्ण समुद्र साहित्य की वजह से संस्कृत भाषा का स्थान महत्वपूर्ण है। भाषाविज्ञान को एक नृतन स्थ में विश्व मंच पर स्थापित करने का श्रेय भी इसी को है। वाल्मीकि, व्यास, कालिदास, माध, भारत, भवभूति, वाणिक, जयदेव आदि संस्कृत के संस्कृत साहित्यकार हैं।

2) मध्यकालीन भारतीय आर्यभाषा :

आर्यभाषा के विकास का मध्यवर्ती रूप 'मध्यकालीन भारतीय आर्यभाषा' के नाम से जाना जाता है। भागवान बुध के जन्म तक भारतीय आर्यभाषा विकास के मध्यकाल में प्रवेश कर चुकी थी। इस समय की भाषा को बौद्ध 'मागधी' अथवा 'मूलभाषा' कहते हैं। मध्यकालीन भारतीय आर्यभाषा तीन कालों में विभाजित है-

1) प्रथम प्राकृत या पालि (५०० ई. से १ ई. तक)
2) द्वितीय प्राकृत या साहित्यिक प्राकृत (२ ई. से ५०० ई. तक)
3) तृतीय प्राकृत या अपभ्रंश (५०० ई. से १००० ई. तक)

भाषिक प्रमुखता के आधार पर विकास के उत्कृष्ट सोपान को क्रमानुसार 'पालि काल', 'प्राकृत काल' और 'अपभ्रंश काल' के नाम से अभिहित किया जा सकता है।

1) प्रथम प्राकृत :

प्रथम प्राकृत के दो वर्ण हैं- पालि और अभिलेखी प्राकृत।
• पालि :

'पालि' मध्ययुग की महत्वपूर्ण भाषा है। इसका संवंध 'पा' धातु से माना जाता है, जिसका अर्थ है- 'शक्ति करना' -दुपालवति रक्षनीति पालि। पालि भाषा का प्रारूपनाम प्रयोग चौथी शताब्दी में लंका में लिखित ग्रंथ 'दीपावंश' में 'बुध वचन' के अर्थ में हुआ है। भाषा के अर्थ में इसके प्रथम प्रयोग करता युगेरीय है। पालि का साहित्य पिटकों और अनुपिटकों में विभक्त है। पिटकों में बुध वचन का संशोधन है तथा पिटकों पर लिखी ठीकाएं 'अनुपिटक' या 'अनुपालि' कही गई हैं। पालि में व्याकरण, कोश, छंद और काव्यशैली भी उपलब्ध हैं। इस काल के शिलालेखों से अनुमान लगता है कि बोलचाल की भाषा के चार रूप विकसित हो चुके थे- परिचयमोनी, मध्यवर्ती, पृथ्वी और दक्षिणी।

• अमिलेकी प्राकृत :

अमिलेकी प्राकृत को 'शिलालेखी प्राकृत' भी कहा जाता है। इसके भी दो वर्ग हैं- अशोकी अमिलेक और अशोककर अमिलेक। अमिलेकी प्राकृत के पांच बोली रूप है- परिचयमोनी, मध्यवर्ती, पृथ्वी, दक्षिणी और परिचयमोनी संस्कृत। यहाँ पालि की तुलना में परिचयमोनी बोली रूप की अभिव्यङ्ग हुई है।

2) द्वितीय प्राकृत :

मध्यकालीन भारतीय आर्यभाषा के विकास की दृष्टि में जो जनमभाषाएं साहित्य में प्रतिष्ठित हुईं, उन्हें 'प्राकृत' कहते हैं। प्राकृत के दो अर्थ हैं- एक तो जनभाषा (प्राकृत जनानां भाषा प्राकृतम) और दूरस्थ प्राकृत या मूल से उत्पन्न अर्थित संस्कृत की पुष्पी (प्रकृतिः संस्कृतम् तत्र भवं प्राकृतम् मुख्ये)। अशोक की धार्मिक-लिपियों की भाषाएं ही इस काल में प्राकृत के नाम से प्रसिद्ध हुईं और संस्कृत के साथ-साथ इनमें रचनाएं भी होती लगी। द्वितीय प्राकृत के परमुख पांच भेद हैं- 1)अशोक नाटकों की प्राकृत 2)धार्मिक विषय की प्राकृत 3)यौन प्राकृत 4)मध्य बोल और पूर्व साहित्यिक प्राकृत। साहित्यिक प्राकृत के भी परमुख पांच भेद हैं- महाराज्य, मानवी, अर्ध मानवी, शीर्षसेनी और पेजाची। इससे महाराज्य महाराज्य की, मानवी मुंह की, अर्ध मानवी धार्मिक कोशल की, शीर्षसेनी मथुरा और उसके आसपास की तथा पेजाची परिचयमोनी भारत की भाषा थी।

3) तृतीय प्राकृत :

मध्य आर्यभाषा का अंतिम रूप 'तृतीय प्राकृत' अर्थात 'अपभ्रंश' के रूप में विकसित हुआ है। यह आधुनिक भारतीय आर्यभाषाओं की उत्तर भाषा है। 'अपभ्रंश'
संस्कृत शब्द है, जिसका अर्थ है- अपभ्रंश या अशुद्ध अर्थतः जो न तो संस्कृत की भाषा है और न प्राकृत है और न अपभ्रंश की भाषा है। इसके लिए ग्रामीण भाषा, देशी, देशभाषा, आभीरामिन, अपभ्रंश, अवध, अवहट्ट अवह, अवसंस आदि नामों के मिलते हैं। डा.हरदेव बाहड़ी ने इसे अभीरामों की भाषा, भोलानाथ तिवारी ने प्राकृत का परवर्ती रूप तथा डा. चटर्जी ने इसे भारतीय आर्यभाषा के कही माना है।

अपभ्रंश शब्द का सर्व प्रथम प्राचीन तत्व त्रिया विद्वान ने अपने 'महाभाष्य' में (लगभग 150 ई. पू.) किया था। भरहरि के 'वाक्यपदीय' (प्रथम शती ई.), भरतपुरिन के 'नाट्यपराश' में (300ई.) यह शब्द 'विभ्रंश' या 'विकृत' के अर्थ में व्यवहृत था, किन्तु भाषा के अर्थ में यह शब्द सर्व प्रथम चंद्र के 'प्राकृत लक्षण' (लगभग दूसरी शती ई.) में प्रयुक्त है। इस काल में अनेक व्यक्तियों ने इस शब्द का उपयोग किया था। अपभ्रंश के अनेक भेद हैं। डा.भोलानाथ तिवारी ने प्राकृतों के आधार पर अपभ्रंश के छः भेद- शौरसनी, महाराज्यी, अर्ध मागधी, मागधी, कक्षी और ब्राह्मण को स्वीकार किया है। इन्हीं अपभ्रंश भेदों से विभिन्न भारतीय आर्यभाषाएँ विकसित हुई है, जो इस प्रकार हैं-

अपभ्रंश अधूर भाषाएँ तथा उपभाषाएँ
शौरसनी पश्चिमी हिंदी, राजस्थानी, पहाड़ी, गुजराती
कक्षा लाहिड़ी
ब्राह्मण अंतर्गती
महाराज्यी मराठी
मागधी बिहारी, बंगाली, उड़िया, असमीया
अर्ध मागधी पूर्वी हिंदी

3) अधूर भारतीय आर्यभाषा:

अपभ्रंश के विभिन्न रूपों से उपयुक्त अधूर भारतीय आर्यभाषाओं का विकास हुआ है। इन अधूर भारतीय आर्यभाषाओं के विकास के प्रमुख दो उद्धार है- 1) संक्रमण काल और 2) विकास काल। इस काल में एक तरफ संस्कृत, प्राकृत और अपभ्रंश आदि के नियती रूप में साहित्य सुझन हो रहा था तो दूसरी तरफ जनभाषा के नकाश में। हेमचंद्र ने जनभाषा के इस नवोदित साहित्यिक रूप को 'ग्राम्य अपभ्रंश' की संज्ञा दी, जबकि अधूर विद्वानों ने इसे पुरानी हिंदी, आर्यभित्तिक हिंदी, पश्चिमी
अप्रेष आदि नाम अभिविनियम किये। डा. सूरतिकुमार चट्टोपाध्याय और सेन ने पत्रकारी अप्रेष को 'अवहट्टा' कहा है।

इस समय एक और साहित्यिक अप्रेष का क्रम: हास होता गया तथा दूसरी और आधुनिक आर्थिकाओं के नये प्रयोगर से आते गये। इस हास और विकास की सहज प्रवृत्ति ने आधुनिक भारतीय आर्थिकाओं को प्राधुर्यकृत किया। हानले, वेड, जियर्सन, चट्टोपाध्याय, रिशेन्द्र वर्मा, आ सीताराम चतुर्वेदी, भोलानाथ तिवारी आदि अनेक विद्वानों ने आधुनिक भारतीय आर्थिकाओं का वर्गीकरण भिन्न-भिन्न तरह से किया है।

इनमें जियर्सन तथा चट्टोपाध्याय के वर्गीकरण अधिक मान्य तथा प्रसिद्ध हैं। डा. जियर्सन ने ‘लिंग्विस्टिक सर्वोप आफ इण्डिया’ में आधुनिक भारतीय आर्थिकाओं का वर्गीकरण तीन वर्गों, छ: समुदायों और सत्रह भाषाओं में विभाजित करके किया था-

(क) बाहरी उपशाखा
1) पश्चिममोत्तरी समुदाय: लहंदा, सिंधी
2) दक्षिणी समुदाय: मराठी
3) पूर्वी समुदाय: उड़िया, बंगला, असमी और बिहारी

(ख) मध्यवर्ती उपशाखा
4) बीच का समुदाय: पूर्वी हिंदी

(ग) भीतरी उपशाखा
5) केन्द्रीय समुदाय: पश्चिमी हिंदी, पंजाबी, गुजराती, भीली, खानदेशी, राजस्थानी
6) पहाड़ों समुदाय: पूर्वी पहाड़ी या नेपाली, मध्यवर्ती या केन्द्रीय, पहाड़ी, पश्चिमी पहाड़ी

संप्रोचित वर्गीकरण:

बाद में जियर्सन ने 'ड्रिड्डन एंटीक्सरिस प्लास्टिस द आफ फेन्स' 1939 ई. में अपने उक्त वर्गीकरण में संप्रोचित प्रस्तुत किया-

(क) बाहरी उपशाखा: 1) पश्चिममोत्तरी वर्ग- सिंधी, लहंदा
2) दक्षिणी वर्ग- मराठी
3) पूर्वी वर्ग- बंगला, असमीया, उड़िया, बिहारी

(ख) मध्यवर्ती उपशाखा: पश्चिमी हिंदी

(ग) भीतरी उपशाखा: 1) अंतर्विकारी भाषाएँ (मध्यवर्ती भाषा से संबंधित)- पंजाबी, राजस्थानी, पहाड़ी वर्ग (नेपाली), गुजराती
2) अत्यन्ती भाषाएँ (वहितंग से संबंधित) पूर्वी हिन्दी

पुरुषितकुमार कटरी ने इंपर्सन के संत्तोष का संदेश करते हुए उनके वर्गीकरण को अवज्ञानिक ठहराया तथा अपना एक भिन्न वर्गीकरण प्रस्तुत किया—

1) उद्दीय (उत्तरी) भाषाएँ : सिंधी, लहंदी, पूर्वी पंजाबी
2) प्रतीय (पश्चिमी) भाषाएँ : गुजराती, राजस्थानी
3) मध्यदेशीय : पश्चिमी हिन्दी
4) प्राचीन (पूर्वी) भाषाएँ : पूर्वी हिन्दी, माध्यम प्रसूत उड़ीसा, बंगला, असमिया
5) दक्षिणात्य (दक्षिणी) भाषाएँ : मराठी।

भोलानाथ विवाही ने उत्तरता या सम्बन्ध अपभ्रंशों के आधार पर अपना भिन्न वर्गीकरण प्रस्तुत किया—

1) शुरुतेनी– पश्चिमी हिन्दी, राजस्थानी, गुजराती, पहाड़ी
2) मागधी– बिहारी, बंगला, उड़ीसा, असमिया
3) अर्ध मागधी– पूर्वी हिन्दी
4) महाराष्ट्री– मराठी
5) न्यायप वेश्वरी– सिंधी, लहंदा और पंजाबी

उत्तरता के आधार पर आधुनिक भारतीय आर्यभाषाओं का उक्त वर्गीकरण अन्यथिक निरापद और समीचीन माना जा सकता है।

इस विवेचन के आधार पर समग्र भाषा परिवार और उसमें भारतीय आर्यभाषा के स्थान को आलेख के द्वारा इस प्रकार देख सकते हैं—
हिंदी भाषा का उद्भव:

भारतीय आर्थिक विकास क्रम को जानने के बाद यह जानना आवश्यक है कि हिंदी भाषा का कब जन्म हुआ। इसने तो स्पष्ट है कि उसका जन्म आर्यों की प्राचीन भाषा से हुआ है। हिंदी पांच उपभाषाओं अथवा बोली समूहों (पश्चिमी हिंदी, पूर्वी हिंदी, राजस्थानी, पंजाबी, बिहारी) का साम्राज्यक नाम है। यह शौर्यसेनी, अर्ध मानधी तथा मानधी अपभ्रंश से १००० ई के आसपास उद्भूत हुई।

हिंदी भाषा एवं शब्द का निर्देशन कैसे हुआ इस बारे में अधिकांश भाषाविद् एकमत नहीं है, किन्तु हिंदी बोलचाल का सर्वोपरि रूप देखें तो डा. पी.टांबर दस बड़खाल के अनुसार- 'संभवत: इसवीं से ७७८ के पहले से यह बोली जाती थी।'७०

हिंदी का आरम्भिक अर्थ 'हिंदीक' हिन्द से संबंधित था। भारत देश के नाम के अर्थ में प्रयुक्त 'हिंदी' शब्द में ईरानी भाषा का विशेषण प्रत्यय 'ईक' जोड़कर 'हिंद+ईक' = 'हिंदीक' शब्द बना, जिसका अर्थ है- हिन्द का। कालांतर में अंतिम व्यंजन 'क' का लोष हो गया तथा 'हिंदी' शब्द हिन्द के विशेषण के रूप में प्रवृत्त हुआ। इस प्रकार 'हिन्द' शब्द से 'हिंदी' शब्द की रचना हुई तथा यह सारी भाषाओं को योग्य करता था।

भाषाविज्ञान के अनुसार 'हिंदी' शब्द की पुर्णता संस्कृत शब्द 'सिन्धु' से हुई है। संस्कृत की 'स' ध्वनि फासी में 'ह' में परिवर्तित हो जाती है। जैसे- सप्तीह, मास-माह आदि। इस प्रकार संस्कृत के सिन्धु, सिन्धु और सिन्धी शब्द फासी में हिन्दु, हिन्द और हिंदी में परिवर्तित हो जाते हैं।

मुसलमानों के आगमन से पूर्व हिंदी के अनेक प्राचीन कवियों कवीर, जायसी, सूर, तुलसी, बिहारी आदि ने हिंदी को सामान्यतया 'भाषा' या 'भाषा' ही कहा था। जैसे- "संस्कृत कवियः कुर्य जल भाषा बहता नीर।"-कवीर ५१
"का भाषा का संस्कृत, प्रेम चाहिए सांच।"-तुलसी ५२

भाषा के अर्थ में 'हिंदी' शब्द के प्रथम प्रयोग करता अर्थबाले थे। छठी शती ई। से पंढरवी शती ई। तक 'ज्वान-ए-हिंदी' के रूप में 'हिंदी' शब्द का प्रथम प्रयोग विदेशियों द्वारा पहले भारत की भाषा संस्कृत के लिए, बाद में मध्ययुग की भाषा 'हिन्दीवी या हिन्दीई' के लिए और अंत में 'हिंदी' के लिए हुआ। भूकंपी शती से १५७६ शती शती तक दक्षिणी कवियों व लेखकों द्वारा हिंदी का प्रयोग किया गया। १५७६ शती के मध्य तक यह उर्दू, रेस्तो, हिंदी के समानार्थ प्रयुक्त हुआ। फाउंट विलियम कॉलेज की स्थापना के पश्चात १९७६ शती शती के प्रथम चरण में अंग्रेजों ने 'हिंदी' का संबंध 'हिन्दूओं' से (संस्कृत शब्द और नागरी लिपि से), उर्दू का
मुसलमानों से (अंग्रेजी-फारसी शब्द एवं फारसी लिपि से) तथा हिन्दुस्तानी को सामान्य जन की भाषा से जोड़ा।

हिन्दी भाषा के लिए ‘हिन्दी’ शब्द का प्राचीनतम प्रयोग शरफुद्दीन यज्ञी के ‘ज्युफरनामा’ (१६२४ ई.) में मिलता है। इससे पूर्व १५वीं शती के पुरातन कवि का केंद्र उल्लेख मिलता है, जिसकी भाषा हिन्दी कही गई है। १०वीं शती के सरहद तथा ९५०ई के लगभग जैन पाठित देवसेन सूरै ने भी इसी भाषा का प्रयोग किया है। १५वीं-१०वीं शती में धर्म प्रचारकों ने धर्म के प्रचार के लिए इसी हिन्दी बोली को माध्यम बनाया। इससे हिन्दी पनपने लगी। हिन्दी शब्दों की इसी अधिकता को लक्ष कर राहुल सांकृत्यान तथा चंद्रवर्ष शर्मा गुलारी जैसे विद्वानों ने इसी भाषा को ‘पुरानी हिन्दी’ के नाम से संबोधित किया।

इस संबंध में डा. सुनीतिकुमार चट्टौंडी ने कहा है— “१६वीं-१३वीं शती की तुर्की विजय के पश्चात (पूर्वी पंजाब से बंगाल तक के) उत्तर भारत में बोली जानेवाली सब बोली तथा भाषाओं का प्राचीनतम एवं सरलतम नाम ‘हिन्दी’ ही है।

इस प्रकार ‘हिन्दी’ हिन्दी की भाषा का नाम है। इसी अर्थ में मिर्दौसी और अलवस्ती (१२वीं शती), अमीर खुसर को (१५वीं शती) और अभुल फजल (१६वीं शती) आदि ने हिन्दी शब्द को ग्रहण किया। अमीर खुसर ने अपनी ‘खलिकबारी’ में ‘हिन्दी’ शब्द नीसा बार और ‘हिन्दी’ शब्द फ़ांच बार देशी भाषा (हिन्दी) के लिए प्रयोग किया है। भाषा के अर्थ में हिन्दी के लिए हिन्दी के अतिरिक्त अन्य भी कई नाम है। जैसे— हिन्दुई, हिन्दवी, हिन्दखी, दक्खनी, दक्खनी या दक्खनी, हिन्दौस्तानी या हिन्दुस्तानी, नगरी, हिन्दी, खड़ीबोली, रेखा, रेखी, उद्ध आदि। इनका प्रयोग हिन्दी के अर्थ में, उसकी विशिष्ट शैली या बोली के रूप में अथवा उससे मिलते-जुलते रूप में यदा-कदा किया गया है।

भाषा के अर्थ में हिन्दी शब्द के प्रयोग की इस विकास यात्रा को हम दो रोपों में देख सकते हैं—

1) हिन्दी शब्द के पर्याप्तात्मक अर्थ :
   - विकास के प्रारंभिक काल में हिन्दी शब्द विदेश में था तथा उनके द्वारा ‘जवान-ए-हिन्दी’ या ‘हिन्दी’ के रूप में भारतीय भाषा के लिए प्रयुक्त होता था।
   - दूसरे चरण में यह शब्द भारत में आया तथा अमीर खुसर के समय के आसपास मुसलमानों की ‘हिन्दी’ के लिए प्रयुक्त हुआ।
• तीसरे चरण में यह हिन्दी एवं दक्षिणी के समानार्थी के रूप में मध्यवर्ती भारतीय भाषा के लिए प्रमुख होने लगा तथा धीरे-धीरे इस शब्द ने अपने भीतर 'उर्दू', 'रस्तन', 'दक्षिणी' या 'हिन्दुस्तानी' को भी समेट लिया।

• चतुर्थ चरण १५०० ई. के बाद का है। गदर काल तक यह शब्द जनता में अपने प्राकृतिक अर्थ में ही प्रयुक्त हुआ था, किंतु बाद में फोर्ट विलियम कालेज और शासन के नस्लिक्ष के प्रभाव स्वरूप यह देखनागरी लिपि में लिखी जानेवाली संस्कृत बहुल हिन्दुओं की भाषा का वाचक बन गया। आज भी यह इसी अर्थ में प्रयुक्त हो रहा है।

2) हिन्दी शब्द के आधुनिक अर्थ:
'हिन्दी' शब्द का प्रयोग आज मुख्य रूप से नीन अर्थों में किया जाता है—

• 'हिन्दी' शब्द अपने व्यापक अर्थ में हिन्दी प्रदेश में बोली जानेवाली पाँच उपभाषाओं तथा सब बोलियों का योग से है।

• भाषाविदों ने सिर्फ 'पति' हिंदी' और 'पूर्वी हिन्दी' को ही हिन्दी माना है तथा इस अर्थ में 'हिन्दी' आठ बोलियों (ब्रज, खड़ीबोली, बंदेली, हरियाणी, कन्नौजी, अवधी, बघेली, सुसूसिङ्गड़ी) का सामूहिक नाम है।

• 'हिन्दी' शब्द का संक्षिप्त अर्थ है— खड़ीबोली साहित्यिक हिन्दी, जो आज हिन्दी प्रदेशों की सरकारी भाषा, भारत की राष्ट्रभाषा तथा संपर्क भाषा है, जिसे 'परिनिरीक्षित हिन्दी' या 'मानक हिन्दी' आदि नाम से भी जाना जाता है।

> हिन्दी भाषा का विकास:
हिन्दी भाषा के विकास का इतिहास जो अद्वित संशद है, इसे मात्र कुछ पुष्तों में देना नितांत अर्थव्यवस्था है। फिर भी कहे तो १५०० ई. में जन्मी हिन्दी भाषा विकसित होते-होते अब लगभग १५०० वर्ष की हो गई है। हिन्दी भाषा के इस विकासक्रम को पश्चातुसार नीन कालखंडों में विभाजित किया गया है—

1) आदिकाल : १०००ई. पू. से १५००ई. पू. तक
2) मध्यकाल : १५००ई. पू. से १६००ई. पू. तक
3) आधुनिक काल : १६००ई. पू. से अब तक।

भाषा विकास के आधार पर उपयुक्त तीनों कालों को हम क्रमशः 'प्रारंभिक हिन्दी युग', 'ब्रजभाषा युग' तथा 'खड़ीबोली युग' भी कह सकते हैं।

१) आदिकाल :
हां काल हिंदी भाषा का आरंभिक काल अर्थात शैव काल है। डा. भोलानाथ तिवारी ने इसे 'आदिकाल' तथा डा. धरेन्द्र वर्मा ने इसे 'प्राचीन काल' कहा है। इस काल की समयवाणी को लेकर डा. विधायमुनि दास कहते हैं- "हेमचंद्र के समय से पूर्व हिंदी का विकास होने लगा था और चन्द्र के समय तक उसका कुछ स्थायर हो गया था। अनादि हिंदी का आदिकाल हम सं. १०४५ के लगभग मान सकते हैं। का मामता प्रसाद गुरु १२००ई से १६००ई तक बताते हैं, जबकि डा. धरेन्द्र वर्मा १०००ई से १५००ई तक कहते हैं। भाषाविदों ने अधिक उच्च ठराव का काल कहते हैं। संपूर्ण हिंदी प्रदेश पर एक तीन सी तथा अधिक साल तक तुर्की मुसलमानों का साम्राज्य था। भाषा भी तुर्की, फारसी प्रवृत्त होनी थी। इस कारण हिंदी प्रदेश की भाषाओं को प्रशासन के स्तर पर कोई प्रत्ययण नहीं मिला।

हिंदी भाषा के प्रारंभिक रूप की सामान्य मूलन: शिलालेख, नामपत्र, पत्र, अपभ्रंश काल, चारण काल, हिंदी अथवा पुराणी खड़ीबोली में लिखे गये साहित्य, सिद्ध, नाथ, जैन तथा मुस्लिम कवियों एवं उनकी रचनाओं से प्राप्त होती है। हिंदी भाषा इस काल में सभी बातों में अपभ्रंश के काफी निकट थी। इसी कारण हिंदी के बाद में आपभ्रंश का अधिक मिहिरण पाया जाता है। आदिकाल के आगामी पैर ती सीता में इसी प्राचीन हिंदी से विकसित अनेक रूप सामने आए, जिसमें हिंदी का एक रूप 'हिंगल' है, जिसका संवें राजस्थानी भाषा-साहित्य से है, दूसरा रूप 'पिंगल' जो वस्तुतः मथयदेश की साहित्यिक त्रजर्भाषा का नाम था। तीसरा रूप 'हिंदी' के नाम से जाना जाता है, जिसका रूप १९वीं शताब्दी के खूसरों के साहित्य में दिखायी देता है।

इस काल में हिंदी में अपभ्रंश के अन्दर स्वर के उपरांत दो नये संयुक्त स्वर 'ए', 'ओ' का प्रचलन हो गया था। च, छ, ज, झ जैसे अपभ्रंश में प्रयुक्त स्वर्ण व्यंजन आदिकालीन हिंदी में स्वर्ण संयंत्र हो गये। हिंदी में द और ध दो नये व्यंजनों का समावेश हुआ। व्यक्तिक ध्वनि से देखें तो अपभ्रंश, जो काफी हट तक संयुक्तात्मक भाषा थी, हिंदी सहायक शब्दावली तथा प्रायः के प्रयोग के कारण वियोगात्मक होने लगी। नृपसेनकाम का प्रयोग आदिकालीन हिंदी में प्रायः समाप्त हो गया। शब्द-वहार की ध्वनि से भी कुछ परिवर्तन पाये जाते हैं। भक्त आदिकाल के प्रारंभ के कारण तत्सम शब्द, मुसलमान के आगमन के कारण प्रस्तो, अरबी-फारसी तथा तुर्की भाषा के शब्द हिंदी में आ गये थे। इस काल के प्रसिद्ध साहित्यकारों में नयाँयता नाल, चंदवरदार, खुसरों, जौनिक, गोरखनाथ, वियापरी, ख्याता वंदनावाज तथा करी विशेष प्रसिद्ध हैं। इस प्रकार हम देखते हैं कि हिंदी अपने विकास के आदिकाल में चारों ओर से शक्ति ग्रहण करते हुए विकसित होती जा रही थी।
2) मध्यकालः

मध्यकाल का प्रारंभ भी एक महत्वपूर्ण राजनीतिक परिवर्तन से हुआ। इस काल तक आते-आते तुर्की का शासन समाप्त हो गया था तथा मुगलों का साम्राज्य स्थापित होने लगा था। सना के इस परिवर्तन के संकारणित काल में कुछ समय तक राजपूतों का भी प्रभुत्व रहा था, जिन्होंने हिंदी को विशेष प्रोत्साहन दिया। देश में शांति तथा राज्य की ओर से कम उपेक्षा होने के कारण साहित्य चर्चा भी विशेष हुई। इसलिए यह हिंदी का स्वर्ण युग कहा जा सकता है। तथापि हिंदी का स्वर्ण स्वर्ग निकट गया।

इस समय तक आते-आते हिंदी के स्वर्ण में स्थिति के दर्शन होते हैं और वह आत्म निर्भर होने लगती है। अपभ्रंश के रूप इस समय तक लुप्त होने लगे तथा हिंदी की प्रमुख तीन बोलियाँ ब्रज, अवधी और खड़ीबोली अस्तित्व में आयी। इसमें ब्रज कृष्णभक्तिधारा के द्वारा, अवधी रामभक्तिधारा के द्वारा धार्मिक आध्यात्मिक धारणा पाकर साहित्यिक भाषा बन गई। ब्रजभाषा को सूर ने १६वीं शती के प्रारंभ में साहित्यिक रूप दिया, बाद में नंददास, कुंभनदास, परमांतदास, हरिराम व्यास आदि भक्त कवियों की वाणी के द्वारा ब्रजभाषा समस्त उत्तर भारत में फैल गई। अवधी भाषा का प्रथम रूप कवियों आदि संस्कृत भाषा में मिलता है। आगे चलकर जायसी, तुलसी आदि महाकवियों के साहित्य का माध्यम बनी तथा रीतिकाल में वह परिमार्जित होकर काली निकट गयी।

इस काल में खड़ीबोली आशिक रूप से राजनीति का सहारा पाकर बहुत धीमी गति से विकसित होने लगी थी। इसका स्वर्ण प्रथम रूप भक्त नामदेव (जन्म संवत १९२२) की कविता में मिलता है। ब्रज, अवधी के समान प्राचीन होने के कारण खड़ीबोली ने नाथों और दक्खन के कवियों आदि निगण्यों सुफी और गैर सुफी कवियों के वाणी का आधार बनी।

मध्यकाल तक आते-आते हिंदी अपभ्रंश की छाया से कमोदेश मुक्त होकर स्वर्णता रूप श्रद्धात रक्षा करने लगी। हिंदी भाषा में फासी के प्रभाव से क,ख,ग,ज,फ़ के पौंच नये व्यंजन आ गये थे। हिंदी के उत्कार्ण में शब्द का अंत्य 'अ' लुप्त हो गया। अर्थ रूप से 'राम' का उच्चारण 'राम' होने लगा। इस काल में हिंदी परस्मन तथा सहायक क्रिया की प्रयुक्ति के कारण और भी वियोगस्थित बन गई। उच्च वर्ग पर फासी के प्रभाव के कारण हिंदी की वाक्य रचना फासी से प्रभावित हुई।

हिंदी के शब्द भंडार में तत्परता तथा तब्बल शब्दों के अतिक्रित अर्थ, फासी, फ़र्तो, नूकी के शब्द भी काफी आ गये थे। यूनायत के संपर्क के फल स्वर्ण कुछ पुरावशाली, फासीस्वर्ण तथा अंग्रेजी शब्द भी हिंदी में आ गये थे। धर्म की प्रधानता के कारण ब्रज, अवधी के साथ दक्खनी, उर्दू, हिंदी, मैथिली और खड़ीबोली में भी साहित्य रचा गया। इस काल के प्रमुख
साहित्यकार ज्ञानी, सूर, मीरा, तुलसीदास, केशव, विहारी, देव, भूषण, वजही, बुधनादीन, कूली कुर्दवाल आदि हैं। इस प्रकार मध्ययुग में हिंदी आपरंपरा के प्रभाव से काफी मुक्त हो गयी और उसका स्वभाव भी रिसर्ट होने लगा।

3) आधुनिक काल :

हिंदी भाषा के विकास का आधुनिक काल भी राजनीतिक परिवर्तन का काल रहा है। यह हिंदू नरेशों, मराठों, अफगानों और मुगलों के परवर तथा उन पर गोरे के विजय का काल है। इस काल में जमीनी भाषा का बहुत अधिक विकास हुआ। इस काल की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि साहित्य प्रेस, पुराणगढ़ और स्वाधीनता आंदोलन के कारण जन साधारण का वस्त्र बन गया। साहित्य का केंद्र राजस्थान से हटकर शिक्षित मध्यमवर्गीय समाज हो गया। इस काल के आरंभ में तीन भाषा शैलियाँ प्रचलित थी- ब्रजभाषा, ब्रज और खड़ीबोली। किन्तु बाद में अंग्रेजी के शासन, भ्रामणपुर मिशन तथा फॉर्ट विलियम्स कालेज ने खड़ीबोली को विशेष प्रोत्साहन दिया। राष्ट्रीय काव्यभाषा 'ब्रज' के स्थान पर 'खड़ीबोली' की स्थापना की गई और दूसरी तरफ 'खड़ीबोली' गय साहित्य का मुनाफाधार बन गयी।

इस काल में अंग्रेजी का पतन-पाठन भी होने लगा। यह अंग्रेजी और पुरातनी के अनंत शब्द जैसे- स्कूल, कालेज, मास्टर, इंजीनियर, डाक्टर, पेसेंजर, आदि हिंदी भाषा में पुल-मिल गये थे। अंग्रेजी शिक्षा के प्रचार के कारण बहुशिक्षित लोगों में 'आ' ध्वनि भी हिंदी में प्रयुक्त हो रही थी। जैसे- कालेज, डाक्टर, आफिस, आन्सर आदि। हिंदी भाषा के आदिकाल में दो संयुक्त स्वर ‘ए’, ‘ओ’ आये थे, किन्तु आधुनिक काल में स्थिरता कुछ भिन्न हो गई। डा. भोलानाथ निवारी ने इस संबंध में तीन बातों का उल्लेख किया है-

क) पश्चिमी हिंदी क्षेत्र में ये रेत सामान्यतः मूल स्वर-रेत में उच्चित होते हैं।
ख) पूर्वी हिंदी क्षेत्र में अब भी ये 'ए', 'ओ' स्वर में संयुक्त स्वर के स्वर में प्रयुक्त हो रहे हैं।
ग) 'नेया', 'वेयकरण', 'कोआ' जैसे शब्दों में पश्चिमी तथा पूर्वी दोनों ही हिंदी क्षेत्रों में 'ए', 'ओ' का उच्चारण रामकः संयुक्त स्वर 'आ', 'ओ' स्वर में होता है।

व्याकरण की दृष्टि से आधुनिक काल हिंदी भाषा के मानकीकरण का काल है। हिंदी भाषा पूर्णतः वियोगात्मक हो गई। हिंदी भाषा वाक्य रचना, भृत्तों तथा लोकोक्तियों के क्षेत्र में अंग्रेजी से काफी प्रभावित हुई। पारिवारिक शब्दों के क्षेत्र में भी हिंदी भाषा ने संस्कृत, अंग्रेजी से काफी कुछ ग्रहण किया है। द्वारानंद सरस्वती, राजा लक्ष्मण प्रसाद, भारतेन्दु हरिशचंद्र, आचार्य महावीर प्रसाद दिवेदी, गामचंद शुक्ल, महादेवी वर्मा, डा. हजारी प्रसाद दिवेदी आदि
अनगिनत साहित्यकारों ने इसे आधुनिक हिंदी का स्वप्न प्रदान किया। साथ ही साहित्य भी अनेक विधाओं—कहानी, नाटक, एक्साकी, रेखाचित्र, संस्मरण, स्पोर्ट्स, भाषा-विद्वान आदि में विकसित हुआ है। निष्कर्ष: इस काल में हिंदी अपनी साहित्यजन्मना में अधिक सहीक, निष्पात, गहरी तथा समुद्र होती जा रही है।

उपर्युक्त तीनों कालों को देखते हुए कहा जा सकता है कि हिंदी ने अपने इतिहास के लगभग 1000 साल पर बस लिया है। विभिन्न कालों की राजनैतिक, सामाजिक तथा धार्मिक परिस्थितियों से गुजरती हुई अपनी भिन्न-भिन्न बोलियों के स्तर में साहित्यक सच्चा और दैनिक व्यवहार का माध्यम बनती हुई यह आज एक विशाल जन समूह की भाषा के स्तर में प्रतिष्ठित है। इस काल-वकालत में से हिंदी खबरीबोली सर्व साहित्य की ही भाषा नहीं, बल्कि वह जन संचार माध्यम की भी भाषा बन गयी है। मीडिया की हिंदी भाषा के शब्दों में जवरदस्त कोड मिश्रण देखने को मिलता है।

• हिंदी भाषा की बोलियाँ तथा क्षेत्र विस्तार:

आज हिंदी भाषा अपनी सभी क्षेत्रों में सामान्यतः प्रचलित है। उसके लिए अब क्या पूरा और क्या परिचय, क्या ढेख और क्या विचार। आज यह सभी विधाओं में लगभग दो-तीन साल तक के विशाल क्षेत्र में विशाल जन समुदाय के बीच विवाह भाषा है। डा. भोलानाथ तिवारी ने हिंदी भाषा का क्षेत्र हिमालय पर्वत, पंजाब का कुछ भाग, हरियाणा, दिल्ली, मध्यप्रदेश, उत्तरप्रदेश तथा विहार नियत किया है, इसें हिंदी (भाषी) प्रदेश कहते हैं।१९ डा. लक्ष्मीकंत पाण्डेय हिंदी भाषा का क्षेत्र परिचय में अंबाला से बीकानेर और जेसलमेर, दक्षिण में तापों नदी, बालाघाट से दुर्ग पूर्व में रामगढ़ से भागलपुर और उत्तर में नेपाल की सीमा का संयंत्र करते हुए गंगोत्री और यमुनोत्री तक है। इसका क्षेत्रफल १०५० मील लंबी और लगभग ६०० मील चौड़ा है।२० इसलिए हिंदी बोलियों की संख्या भारत की ही नहीं विश्व की सभी भाषाओं से अधिक है।

 Hindi भाषा की बोलियों के दो प्रकार के क्षेत्रकरण प्रचलित है- प्रयोगकरण का क्षेत्रकरण और केलाण का क्षेत्रकरण। डा. प्रयोगकरण ने राजस्थानी, बिहारी, पहाड़ी वर्ग तथा परिवारी हिंदी और पूर्वी हिंदी इन पाप भागों में हिंदी की विभिन्न बोलियों को विभक्त भाषा है तथा उन्होंने इसके हिंदी का क्षेत्र कहा है। केलाण ने हिंदी का क्षेत्र परिचय से पूर्व की ओर चलने से बोली क्रम इस प्रकार बताया है- १) राजस्थानी बोलियाँ : मारवाड़ी, मेवाड़ी, जैपुरी तथा हड़ताली
2) हिमालयी बोलियाँ : गढ़वाली, कुमाऊँनी, नेपाली
3) दोआब की बोलियाँ : ब्रज और कनीजी
4) पूर्वी बोलियाँ : अवधी, रीवाज़ी, भोजपुरी, मणिहरी तथा मैथिली
इसमें 5) बैसन्गड़ी तथा 6) खड़ीबोली को भी सम्मिलित किया गया है।

क्षेत्र के अनुसार हिंदी की बोलियाँ तीन प्रकार की है-
1) हिंदी क्षेत्र की बोलियाँ
2) भारत के अन्य भाषा क्षेत्र की हिंदी बोलियाँ
3) भारत से बाहर बोली जानेवाली हिंदी बोलियाँ
4) हिंदी क्षेत्र की बोलियाँ :

हिंदी क्षेत्र में हिंदी की प्रधानता सत्रह बोलियाँ शामिल हैं तथा इन्हें पाँच
बोली वर्गों में विभक्त किया है। इसका वर्गीकरण इस प्रकार है-

<table>
<thead>
<tr>
<th>भाषा</th>
<th>उपभाषा</th>
<th>बोलियाँ</th>
</tr>
</thead>
<tbody>
<tr>
<td>हिंदी</td>
<td>पश्चिमी हिंदी</td>
<td>खड़ीबोली या कोस्वी, ब्रजभाषा, हरियाणवी, बुन्देली, कनीजी</td>
</tr>
<tr>
<td></td>
<td>पूर्वी हिंदी</td>
<td>अवधी, बंगाली, नसीरगढ़ी</td>
</tr>
<tr>
<td></td>
<td>राजस्थानी</td>
<td>पश्चिमी राजस्थानी (मारवाड़ी), पूर्वी राजस्थानी (जयपुरी), उत्तरी राजस्थानी (भोजपुरी), कश्मीरी राजस्थानी (मालवी)</td>
</tr>
<tr>
<td></td>
<td>पहाड़ी</td>
<td>पश्चिमी पहाड़ी, मध्यपश्चिमी पहाड़ी (गढ़वाली, कुमाऊँ)</td>
</tr>
<tr>
<td></td>
<td>बिहारी</td>
<td>भोजपुरी, मणिहरी, मैथिली</td>
</tr>
</tbody>
</table>

2) भारत के अन्य भाषा क्षेत्र की हिंदी बोलियाँ :

भारत के अन्य भाषाओं के क्षेत्रों में हिंदी की जो बोलियाँ बोली जाती है, वे प्रधानतः
तीन हैं -
1) दक्षिणी हिंदी, 2) बंदरुड़ी हिंदी, 3) कलकत्तिया हिंदी। इसमें दक्षिणी- खड़ीबोली
तथा अवधी से, बंदरुड़ी- खड़ीबोली तथा अवधी से और कलकत्तिया- खड़ीबोली तथा भोजपुरी
से संबंध है।
3) भारत से बाहर बोली जानेवाली हिंदी बोलियाँ :
इन बोलियों में नाजुक़ेंकी, मारिसी, फ़ीजी, सुरीनामी तथा ट्रिनिडाडी मुख्य है।
इसमें नाजुक़ेंकी राजस्थानी तथा ब्रज से, मारिसी, फ़ीजी, ट्रिनिडाडी और सुरीनामी भोजपुरी
तथा अवधी से संबंध है।
इस प्रकार हिन्दी की ये बोलियाँ उसकी अक्षय निधियाँ है।

○ हिन्दी भाषा भाषियों की संख्या :

बोलनेवालों की संख्या की दृष्टि से हिन्दी विश्व की प्रमुख भाषा मानी जाती है।
हिन्दी बोलनेवालों की संख्या १९७१ की जनगणना के अनुसार १५,३७,०६२ बनाई गयी है।
इसमें भोजपुरी बोलनेवाले (१ करोड़ ४५ लाख), छनीयागढ़ी (६६ लाख), मण्डी (६६ लाख),
मार्वाड़ी (४५ लाख) है। हिन्दी भाषा-भाषियों की संख्या के संबंध में डा. चौटरी का कहना है—
"यह २५ करोड़ ७० लाख मानवों की सहज तथा स्वाभाविक अन्तः प्रामाण्य भाषा है। इस २५
करोड़ ७० लाख के अलावा कई लाख लोग इस भाषा को समझ सकते हैं।"२२

इस प्रकार हिन्दी अब विश्व स्तर धारण कर चुकी है। यह एक विशाल क्षेत्र की भाषा बन
गई है। इसकी सीमा पश्चिम में जैश्मेर, उत्तर-पश्चिम में अब्बा, उत्तर में शिमला से नेपाल
के पूर्वी छोर तक के पहाड़ी प्रदेश, पूर्व में भागल पुर तथा दक्षिण-पश्चिम में संडीवा तक पहुँचती
है। इसके अतिरिक्त नेपाल, मारिसा, रस, जर्मनी, यूगोस्लोवाकिया, पोलैण्ड, इटली, फ़िजी,
रोमानिया, चेकोस्लोवाकिया तथा ग्यानाना आदि देशों में भी शिक्षण एवं साहित्य के स्तर पर हिन्दी
का प्रचार-प्रसार हो रहा है। कर्मचारी में हिन्दी भाषा की स्थिति को इंटरनेट की कृत्रिम सरकारी
वेब साइट के आकड़कीय मानही आधार पर इस आलेख के माध्यम से देख सकते हैं—

<table>
<thead>
<tr>
<th>Sum of Nos</th>
<th>Column Labels</th>
<th>Grand Total</th>
</tr>
</thead>
<tbody>
<tr>
<td>Row Labels</td>
<td>Hindi</td>
<td></td>
</tr>
<tr>
<td>1971</td>
<td>207267971</td>
<td>207267971</td>
</tr>
<tr>
<td>1981</td>
<td>257749009</td>
<td>257749009</td>
</tr>
<tr>
<td>1991</td>
<td>329518087</td>
<td>329518087</td>
</tr>
<tr>
<td>2001</td>
<td>422048642</td>
<td>422048642</td>
</tr>
<tr>
<td>2005</td>
<td>490000000</td>
<td>490000000</td>
</tr>
<tr>
<td>Grand Total</td>
<td>1702083709</td>
<td>1702083709</td>
</tr>
</tbody>
</table>
इससे यही पता चलता है कि हिंदी बोलनेवालों की संख्या में दिन बदलती रही है।

हिंदी व्याकरण

• व्याकरण अर्थ-परिभाषा:

व्याकरण वह शास्त्र है, जिसके अध्ययन-विश्लेषण के द्वारा भाषा का उन्मूलन ज्ञान प्राप्त होता है। 'व्याकरण' शब्द वि(उपसर्ग) +आ(उपसर्ग) +कृ धातू से बना है, जिसका अर्थ है- भली-भाँति समझना, पृथक-पृथक करना, विश्लेषण करना। व्याकरण की परिभाषा देते हुए कहा गया है कि-

"व्याक्रियावेधनेतित व्याकरणम।" अर्थात् जिस शास्त्र से भाषा व्याकृत की जाए, उसके पदों को तोड़-तोड़कर प्रकृति-प्रत्यय आदि का ज्ञान-विधान किया जाए वह 'व्याकरण' है। 22

"व्याकरण वह है जो शुद्ध भाषा लिखना और बोलना सिखाए।" 23 व्याकरण के द्वारा भाषा को शुद्ध रूप में पढ़ने, समझने, बोलने तथा प्रयोग करने की कृत्रिमता प्राप्त कर सकते हैं। व्याकरण का उद्देश्य है- किसी भी भाषा की ध्यानियों, वर्णों, शब्दों, शब्दांशों आदि का ज्ञान करकर वाक्य रचना की समीचीन विधि बतलाना। इससे व्यक्ति भाषा को बोलने तथा लिखने में होनेवाली अशुद्धि से बच सकता है। साथ ही किसी भाषा के मानक रूप का परिचालन भी व्याकरण की सहायता से प्राप्त कर सकता है। महाभाष्यकार परंजपले ने 'व्याकरण महाभाष्य' में यहाँ तक कहा है कि "वेदों की रक्षा के लिए भी व्याकरण शीतल चाहिए।" लेकिन हाँ व्याकरण
भाषा पर अनुशासन नहीं लादा तथा शब्द के स्वरूप और अर्थ में परिवर्तन नहीं करता बल्के परंपरा से शब्द का मूल रूप क्या था उसी अर्थ में उसे प्रयुक्त करना, उसके सही स्वरूप को पहचानना तथा भाषिक अज्ञानता और उच्चतमता से लोगों को सही राह दिखाना यही व्यक्ति का मूल उद्देश्य है।

व्यक्ति शब्द अर्थ प्राप्त हेतु है। विश्व का सर्व प्रथम व्यक्ति कब लिखा गया? किस रूप में लिखा गया? ऐसे अनेक प्रकार उपस्थित होना स्वाभाविक है। माना जाता है कि प्रथम व्यक्ति ग्रंथ भारतवर्ष में ही लिखा गया था। वेदभाष्यकार महामहिम सायण ने इसका वर्णन ‘एन्द्रावायु ग्राह्मण’ में किया है-

"बावे पराचयावाक्तावदनं ते देवता हनुमाननामातो वाच्य व्यक्तित् … तस्मादिनं व्यक्तिः वाक।" २४ वेदों की रचना के प्रथम भाषा व्यक्ति की सृजन के फल स्वरूप देखते हुए इन्द्र है सार्थक करते हैं कि देव हमारी भाषा का एक व्यक्ति का नाम दीजिए। तब इन्द्र ने भाषा (के शब्दों या पदों) को बीच से तोड़ इसे व्यक्ति किया। इस तरह वैदिक संस्कृत का सर्वप्रथम व्यक्ति बना किंतु आज इतिहास में नाम मात्र का ही उल्लेख है।

बाद में लोकक का संस्कृत के भी व्यक्ति ग्रंथ लिखे गए। पाणिनि का व्यक्ति ग्रंथ भी प्रसिद्ध है। बाद में प्राकृत के विभिन्न भेदों को लेकर भी व्यक्ति ग्रंथ लिखे गए। तृतीय प्राकृत अपभ्यास काल तक आ. हेमचंद्र ने भी ‘सिद्धंतम्’ ग्रंथ लिख दिया था। बाद में देश के पराधीन होने के कारण विदेशीयों के द्वारा, विदेशी लिपि, शब्द व विदेशी भाषाओं का लेकर व्यक्ति लिखे गए। इस तरह हिंदी भाषा के व्यक्ति लेखन की परंपरा अंग्रेजी दो रूपों में हमारे सामने आती है।

१) यूरोपीय परंपरा आधारित हिंदी व्यक्ति

२) संस्कृत परंपरा आधारित हिंदी व्यक्ति।

प्रारंभ में जब यूरोपीय लोग यहाँ व्यापार के लिए आये थे तब हिंदी या हिंदूस्तानी बोली ही एक ऐसी थी, जिसके द्वारा व्यापार, धर्म प्रचार और शासन कार्य आसानी से चल सकता था। इसलिए विदेशियों के लिए हिंदी सीखना जरूरी बना। ऐसे में व्यक्ति की आवश्यकता उत्पन्न हुई। खासकर उस भाषा हिंदी या हिंदूस्तानी के लिए जिसे लोग मूर्स (Moors) अर्थात अफ्सैट लोगों की अभिज्ञता, गैरवार भाषा कहते हैं। इस प्रकार यूरोपीय परंपरा के द्वारा हिंदी व्यक्ति लेखन सामने आए। इससे देखा देखा हिंदी व्यक्ति लेखन का अनुसरण करने विद्वानों की परंपरा। इसमें भी सीधे भारतीय विद्वानों के द्वारा लेखन कार्य नहीं हुआ, यूरोपीय परंपरा के ही व्यक्ति करने जो संस्कृत में अधीन गति रखते थे, उन्होंने ही प्रारंभिक तौर पर लिखा था। संस्कृत परंपरा से भाषाविद हिंदी व्यक्ति कायम में कामनाप्रसाद गुप्त और किशोरीदास वाजपेयी
प्रसिद्ध है। इस प्रकार हमारा हिंदी व्याकरण यूरोपीय एवं संस्कृत परंपरा के संगम पर खड़ा है। इसमें भी यूरोपीय परंपरा वर्तमानकालिक न होकर ग्रीक और लैटिन परंपरा है। अर्थात हमारा हिंदी व्याकरण ग्रीक, लैटिन, संस्कृत परंपरा से अभिभूत है।

• हिंदी व्याकरण लेखन : विकासक्रम

हिंदी व्याकरण लेखन का एक पूरा इतिहास है। इसके क्रमिक विकासक्रम को विद्वानों ने अलग-अलग कालखंडों में विभाजित किया है। डा. अनंत चौधरीने२५ हिंदी व्याकरण के संपूर्ण विकास की लगभग 300 वर्षों की अवधि को पांच कालखंडों में विभाजित किया है-

1) आरंभिक काल- सन १६७६-१८५५ ई।
2) विकास काल- सन १८५५-१८७६ ई।
3) उद्यान काल- सन १८७६-१९२० ई।
4) उत्कर्ष काल- सन १९२०-१९४७ ई।
5) नववेतना काल- सन १९४७ ई. से वर्तमान काल तक।

डा. बीणा गर्नें हिंदी व्याकरण की विकासयात्रा को तीन कालखंडों में वर्गीकृत किया है-

1) आदिकाल : आ) पूर्व आदिकाल-संक्रान्ति युग (सन १६८० से पूर्व)
   आ) उत्तर आदिकाल- पारंपरिक वेयाकरण युग (सन १६८० से १८५५ ई।)
2) मध्यकाल : इ) पूर्व मध्यकाल-प्रीलाल युग (सन १६८० से १८५५ ई।)
   इ) उत्तर मध्यकाल- केलांग युग (सन १६७६ से १९२० ई। तक)
3) आधुनिक काल : उ) पूर्व आधुनिक काल- स्वतंत्रता पूर्व युग
   (सन १९२० से १९४७ ई। तक) (पूर्व युग)
   उ) उत्तर आधुनिक काल- स्वतंत्रतायोग समय युग
   (सन १९४७ से वर्तमानकाल तक)

इसी विकासयात्रा को केंद्र में रखते हुए हिंदी व्याकरण का विकासक्रम इस प्रकार देख सकते हैं-  

1) आरंभिक काल (सन १६७६-१८५५ ई।):

हिंदी व्याकरणस्तर के आरंभिक युग में अर्थात लगभग पीने दो सी वर्षों तक सिर्फ विदेशियों के द्वारा ही हिंदी व्याकरण लिखा गया। इन विदेशी वैवाकरणों ने यूरोपीय भाषाओं के व्याकरण को आधार लेकर ही खड़ीवोली हिंदी का व्याकरण लिखा था। हिंदी का सबसे
ग्रामांकिता हिंदोस्तानिका के बाद अनेक विद्वेशी वैयक्त द्वारा हिंदी व्याकरण लिखे गये। इसमें से कुछ हिंदी व्याकरण 'संग्रामिका हिंदूस्तानिका' (१७४६-४७) ग्रामांकितण हुआ। बाद में जार्ज एडवर्ड के 'व्याकरण सन १७७२ में लंदन से प्रकाशित हुआ।

कलकत्ता के पॉर्ट विलियम कालेरज के हिंदूस्तानी विभाग के अध्यक्ष डा. जान बार्थविक गिलक्रैस्ट का 'ए ग्रामार अफ द हिंदूस्तानी लैंबेज' १७९७ ई. में लिखा। यह व्याकरण ग्रंथ उनके 'A system of Hindooostanee Language' स्कंद-१ का तीसरा भाग था।

गिलक्रैस्ट के बाद अनेक विदेशी वैयक्त द्वारा हिंदी व्याकरण लिखे गये। इसमें से कुछ हिंदी व्याकरण 'संग्रामिका हिंदूस्तानिका' (१७४६-४७) ग्रामांकितण हुआ। बाद में जार्ज एडवर्ड के 'व्याकरण सन १७७२ में लंदन से प्रकाशित हुआ।

जान शेक्सपियर का 'ए ग्रामार अफ द हिंदूस्तानी लैंबेज' (१७५३ ई. लंदन से प्रकाशित), केप्टन विलियम प्राइस का 'हिंदूस्तानी ग्रामार' (१७५३-५४ ई. लंदन से प्रकाशित), विलियम पेटर्स का 'इंट्रोडक्शन टू द हिंदूस्तानी लैंबेज' (१७५७ ई. कलकत्ता से प्रकाशित), रेकर्ड एम टी. एडम का 'हिंदी भाषा का व्याकरण' (१७५५ ई. कलकत्ता से प्रकाशित), डॅकन फोर्ट का 'हिंदूस्तानी मूले' (१७५५ ई. वी. इस्टिक का 'ए कन्साइज़ ग्रामार अफ द हिंदूस्तानी लैंबेज' (१७५५ ई. सेनफोर्ड एरिनट का 'ए ट्यू फ्लेक्स-इंड्रोइडिटेल ग्रामार अफ द हिंदूस्तानी टू' (१७५५ ई. लंदन से), जेम्स वेल्टाइन का 'ग्रामार अफ हिंदूस्तानी लैंबेज' (१७५५ ई. जेम्स एडवर्ड्स का 'लस्ट्रोपियर' गार्सिया द तासी, जेम्स आर. वेल्टाइन, ड. एडवर्ड्स एरिनट और ब्रायन विलियम्स ने अपने रचनाओं के माध्यम से खड़ीविली हिंदी को स्थापित करने का प्रयास किया है।

2) विकास काल (सन १७५५-१७५६ ई. तक):

पं. श्रीलाल के 'भाषा चिन्हों' के प्रकाशण के साथ ही हिंदी व्याकरण के विकासकाल का उद्योग होता है। पं. श्रीलाल हिंदी व्याकरण लिखनेवाले प्रथम भारतीय विद्वान थे। इन्हीं से हिंदी व्याकरण के क्षेत्र में भारतीय विद्वानों का पदार्पण होता है।

इस काल में संस्कृत व्याकरण का आधार बनाकर हिंदी व्याकरण लेखन कार्य होने लगा। 'भाषा चिन्हों' के बाद पं. रामप्रकाश के 'भाषा तत्त्वाधिनी' (१७५८ ई.), गुरुग्म भुवन्द्रक के 'कोलोंटिकल डायलॉग्स इन हिंदूस्तानी' (१७५८ ई.), छात्र मोनिक पिलियम के 'सर्दिमेंंटल अफ हिंदूस्तानी ग्रामार' (१७५८ ई.), 'एन ईंजी इंट्रोडक्शन टू द रॉली अफ हिंदूस्तानी' (१७५८ ई.),
'हिन्दुस्तानी प्राइमर' (१८६८ई), हेदर जंगवाहदर का 'ट हिन्दुस्तानी' (१८६९ई), 'ए प्रेक्सिटकल हिन्दुस्तानी ग्रामर' (१८६८ई), नवीनचर राय का 'नवीन चंद्रोदय' (१८६८ई), विलियम एप्सिलन का 'स्ट्रॉजेट्स ग्रामर अफ द हिन्दी लैकेज' (१८७३ई), प. हरिगोपाल पाण्डे का 'भाषातन्त्र दीपिका' (१८७५ई), भेंज प्रसाद मिश्र का 'हिन्दी लघु व्याकरण' (१८७५ई), जान डाउन का 'ए ग्रामर अफ द उद्द अफ द हिन्दुस्तानी लैकेज' (१८७५ई), जान फार्म्सन का 'हिन्दुस्तानी भाषा कोश' (१८७५ई), जान डी फ्लैट्ट का 'हिन्दुस्तानी ग्रामर' (१८७५ई), ए. एफ्स्टोल्फ हर्नेली का 'ए कम्पेटेंट ग्रामर अफ द गीडियन लैकेज' (१८८०ई), आदि के व्याकरण ग्रंथ में निरंजन व बाद व्याकरण के स्वर्ण में अधिक निर्धार आ गया। इस काल के अधिकांक्त व्याकरण कर्म के भारतीय एवं हिन्दी पर अधिकार रखनेवाले होने के कारण उत्तम कार्य हुआ। इन व्याकरणीयों ने विकासनकता के साथ-साथ तुलनात्मक एवं ऐतिहासिक अध्ययन की भी नींव डाली।

3) उत्थान काल (१८७६-१९२०ई) :

हिन्दी व्याकरण का उत्थान काल समस्त हेनरी केलंग के 'ए ग्रामर अफ द हिन्दी लैकेज' से गुरु होता है। इसका हिन्दी अनुवाद डा. प्रीराम शर्मा के द्वारा १९०८ई में हुआ। इस समय सिर्फ व्याकरण के लिए ही उत्थानकाल नहीं था, हिन्दी भाषा एवं साहित्य का भी उत्थान काल था। इस समय हिन्दी का रथ और स्वर्ण मिलता निखरते लगा था। इस काल के व्याकरणों में केलंग प्रमुख है। इन्होंने हिन्दी प्रदेश में प्रयुक्त सभी बोलियों के सामान्य हिंदी नाम के लिए 'हिन्दी' शब्द का प्रयोग किया था। इस समय अर्थोद्योग प्रसाद खट्टी ने 'हिन्दी व्याकरण', वेधशाल ग्रंथ ने 'भाषातन्त्र व्याकरण' (१८७५ई), चिरमलाल ने 'हिन्दी व्याकरण' (१८७५ई), गोविंद देव शास्त्री ने 'वाल बोध व्याकरण' (१८७५ई), शिवदयाल उपाध्याय ने 'हिन्दी व्याकरण सार' (१८८५ई), फ्रीडरिक पिंकाट ने 'द हिन्दी मेनूज़ल' (१८९५ई), भारतेन्दु हरिकंद्र ने 'प्रमथ हिन्दी व्याकरण' (१८८८ई), एडवर्ड ग्रीन ने 'ए ग्रामर अफ मार्डन हिन्दी' (१८९६ई), ठाकुर रामनारायण सिंह ने 'हिन्दी व्याकरण' (१८९७ई), प. राम अबतार शर्मा ने 'हिन्दी व्याकरण' (१८९७ई), राम दोहिन मिश्र ने 'प्रबृविधिका हिन्दी व्याकरण' (१८९८ई), रामलोचन शर्मा ने 'हिन्दी व्याकरण चंद्रोदय' (१९०२ई), प. अंबा की प्रसाद बापेंयी ने 'हिन्दी कोमुडी' (१९०३ई), परिषद् व्याकरण ने 'हिन्दी व्याकरण' (१९०४ई) झंडा लिखा।

इसके अतिरिक्त प. महंत मोहन, ई. एस. पारम, जार्ड्स ए. ब्रिस्टल, प. अंबा की प्रसाद व्यास, गणपति लाल चौबे, प. सुधाकर दिवेदी, नारायण शास्त्री, माधव प्रसाद पाठक आदि के नाम गृहीत है। इन्होंने हिन्दी को प्रतिष्ठित बनाने के लिए ठोस नियम बनाये थे।

4) उत्तम काल (१९२०-१९५८ई) :
हिन्दी व्यक्ति का उत्कर्ष काल प्र कामताप्रसाद गुरा के १९२० ई. में लिखित 'हिन्दी व्यक्ति' से आयतं होता है। यही से मनाक हिन्दी का श्रीगणेश होता है। अन्यतः गुरा का हिन्दी व्यक्ति हिन्दी भाषा के उत्कर्ष में एक नये युग का मार्गदर्शक बनकर आया। इस शंख के बारे में स्वयं गुरा अपनी भूमिका में कहते हैं- "हिन्दी व्यक्ति की छोटी-मोटी कई पृष्ठकं पुस्तकें उपलब्ध होते हुए भी हिन्दी में, इस समय अपने विचार और दंग की यही एक व्यापक और (संभवतः) मौलिक पृष्ठक है।........ नियमों के संपदीकरण के लिए इसमें जो उदाहरण दिये गये हैं वे अधिकतर हिन्दी के भिन्न-भिन्न कालों के प्रतिलिपित एवं प्रामाणिक लेखकों के श्रों से लिये गये है। इस विशेषता के कारण पृष्ठक में यथासंभव अंश-परंपरा अथवा कृतिमता का दोष नहीं आने पाया है।"२७

इस काल में जिव नागराज लाल का 'ए मैनुअल आफ नावर हिन्दी ग्रामर एण्ड कम्योजीशन' (१९२५ई), आमतौर पर दास गुप्ता का 'सहज हिन्दी और हिन्दुस्तानी' (१९२१ई), श्रीनारायण चट्टोपाध्याय का 'नवीन हिन्दी व्यक्ति' (१९२४ई), बी.एल.जैन चौथा का 'बुलबुल शहीरी', विवालकार का 'व्यक्ति मर्यादा' (१९२९ई), पं. गिरिजामाल शर्मा का 'व्यक्ति भूमि' (१९३१ई), सन्तनकार का 'हिन्दी व्यक्ति' (१९३३ई), डा. धीरेन्द्र वर्मा एवं डा. बाबूराम सकसिना का 'नवीन हिन्दी व्यक्ति' (१९३३ई), भूकंपकार मिश्र का 'हिन्दी वोध' (१९३४ई), पं. गणेश प्रसाद दिवेन्द्र का 'आधुनिक हिन्दी व्यक्ति और सफ्या' (१९३४-3५ ई.), ना. नागराज का 'व्यवहारिक हिन्दी' (१९४३ई), वासुदेव पिल्ले का 'हिन्दी व्यक्ति' (१९४५ई) आदि। इन व्यक्तियों के मूल उद्देश्य हिन्दी को मनाक रूप में स्थापित करना था और वे इस दिशा में सफल भी हुए हैं।

प्रणवमयन काल (१९४५ई. के बाद ) :

नवगति काल में हिन्दी व्यक्ति के क्षेत्र में पं. किशोरिदास बालशेखर जाता बनकर आये। उन्होंने 'ब्रजभाषा का व्यक्ति' (१९४३ई.), 'अच्छी हिन्दी का नमुना' (१९४५ई.), 'राजभाषा का प्रथम व्यक्ति' (१९४५ई.), 'हिन्दी निष्क्रिय सौर सूत युग की रचनाकर कब तक के वयस्कों द्वारा हुई भूमिका की विशेषता से चर्चा की। 'राजभाषा का प्रथम व्यक्ति' देखकर कुछ विद्वान कहने लगे- "हिन्दी के व्यक्ति के बहुत हैं, पर जब से हिन्दी राजभाषा हुई है, तब से यह पहला ही व्यक्ति है और इसलिए 'प्रथम' शब्द दिया गया है।"२८ इससे प्रभावित नागरी प्रापरिशन सम्म, वागानसे ने इन्हें बड़ा व्यक्ति लिखने के लिए आमंत्रित किया, जिसके प्रभाव स्वर्ग 'हिन्दी श्रीमाननारायण' (१९५०ई.) समाने आया। इसी गभ पर चलते इस काल के वयस्कों में आ. शिवपूर्ण सहाय का 'व्यक्ति वर्ण', दुर्गिरि का 'हिन्दी व्यक्ति' (१९५०ई.), डा. अर्जुन शर्मा का 'ए बेसिक ग्रामर आफ मार्सिन हिन्दी' (१९५८ई.), डा. वासुदेव
नंदन प्रसाद का 'आधुनिक हिंदी व्याकरण और संस्करण' (१९५५), भरतेत्र लिंग का 'अच्छी हिंदी लिखने के लिए' (१९६५), और 'हिंदी भाषाधर्म', देवेन्द्र नाथ शर्मा का 'हिंदी समस्याएँ और समाधान' (१९६६), डा. ज. म. दीमक्ष्ट का 'हिंदी व्याकरण की स्पेश्या' (१९६६), विनय मोहन शर्मा का 'हिंदी का व्याख्यातंत्र रूप' (१९६७), बाल मुकुट का 'हिंदी क्रिया रूप और विशेषण' (१९६७), देवेन्द्रनाथ शर्मा और रामदेव त्रिपाठी का 'हिंदी भाषा का विकास' (१९६७), डा. विजयपाल सिंह का 'हिंदी का व्याख्यातंत्र व्याकरण' (१९६७) और सामान्य हिंदी (१९६८) महत्वपूर्ण है। यहाँ तक आते-आते हिंदी भाषा का मानक रूप स्थापित हो चुका था।

इस प्रकार हिंदी व्याकरण शास्त्रियों ने आरंभ में निर्देश दिया, बाद में विवरणात्मक, ऐतिहासिक एवं तुलनात्मक पद्धतियों का आवश्यक ग्रहण करते हुए धीरे-धीरे हिंदी व्याकरण एवं भाषा में सुधार एवं नवीनता स्थापित की है।

• संदर्भ सूची:

1) हिंदी भाषा का इतिहास (आलोचनात्मक अध्ययन), राजनाथ शर्मा, पृष्ठ-१२
2) भारतीय साहित्य-भाषा, मीडिया और संस्कृति, डा. मंजु मुकुल तथा डा. हरवाला, पृष्ठ-८४
3) आधुनिक भाषाविज्ञान, डा. राजमणि शर्मा, पृष्ठ-९३
4) हिंदी भाषा का उद्गम और विकास, डा. उदयनारायण निवारी, पृष्ठ-७
5) हिंदी भाषा की संरचना, डा. भोलानाथ निवारी, पृष्ठ-१०
6) हिंदी भाषा और साहित्य का विकास, डा. अमर प्रसाद जापवाल, पृष्ठ-२०
7) भाषाविज्ञान तथा हिंदी भाषा का विकास, डा. लक्ष्मीकांत पाण्डेय, पृष्ठ-७
8) हिंदी: उद्भव, विकास और रूप, डा. हरदेव बाहरी, पृष्ठ-२८
9) हिंदी भाषा नागरी लिपि और अंक, डा. जयंतीप्रसाद, पृष्ठ-६९
10) हिंदी भाषा का इतिहास (आलोचनात्मक अध्ययन), राजनाथ शर्मा, पृष्ठ-७४
11) हिंदी का राष्ट्रभाषा के रूप में विकास, डा. शिवराज वर्मा, पृष्ठ-२२
12) कहीं, पृष्ठ-२२
13) हिंदी भाषा की संरचना, डा. भोलानाथ निवारी, पृष्ठ-९९
14) हिंदी भाषा का इतिहास (आलोचनात्मक अध्ययन), राजनाथ शर्मा, पृष्ठ-७५
15) भारतीय आर्थिक और हिंदी, डा. सुनीतकुमार चटर्जी, पृष्ठ-९५
16) हिंदी भाषा का इतिहास (आलोचनात्मक अध्ययन), राजनाथ शर्मा, पृष्ठ-७६
27) हिन्दी भाषा का इतिहास, डा. धीरेन्द्र वर्मा, पृष्ठ-८०
28) हिन्दी भाषा की सरचना, डा. भोलानाथ तिवारी, पृष्ठ-२३, २४
29) कवि, पृष्ठ-६२, ६३
30) भाषाविज्ञान तथा हिन्दी भाषा का विकास, डा. लक्ष्मीकांत पाण्डेय, पृष्ठ-४४
31) भारतीय आर्थिक और हिन्दी, डा. सुनीतकुमार चटर्जी, पृष्ठ-६४
32) हिन्दी शब्दावली, पं. किशोरीदास बाजपेयी, पृष्ठ-६८
33) भाषा अध्ययन के स्थिर आयाम, डा. भोलानाथ तिवारी, पृष्ठ-३८३
34) हिन्दी शब्दावली, पं. किशोरीदास बाजपेयी, पृष्ठ-६८
35) हिन्दी व्याकरण का काल विभाजन : एक दृष्टि, पृष्ठ-४६
36) कवि, पृष्ठ-४८, ५४
37) हिन्दी व्याकरण, पं. कामताप्रसाद गुर, भूमिका, पृष्ठ-६
38) हिन्दी शब्दावली, पं. किशोरीदास बाजपेयी, पृष्ठ-६८